Chapter ग्यारह
महापुरुष का संक्षिप्त वर्णन

पूजा के सन्दर्भ में इस अध्याय में महापुरुष तथा प्रत्येक मास में सूर्य के विभिन्न विस्तारों का वर्णन हुआ है। सर्वप्रथम श्री सूत शौनक ऋषि को उन भौतिक वस्तुओं के बारे में बताते हैं जिनसे जीव भगवान् श्री हरि के मुख्य अंगों, उपांगों, आयुधों तथा वस्त्रों को समझ सकता है। तत्पश्चात् वे उस व्यावहारिक सेवा विधि की रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं जिसके द्वारा मर्त्य प्राणी अमरता प्राप्त कर सकता है। जब शौनक सूर्य देव के रूप में भगवान् हरि के विस्तार के बारे में अधिक जानकारी के लिए रुचि प्रदर्शित करते हैं, तो सूत गोस्वामी उत्तर देते हैं कि ब्रह्माण्ड के अन्तस्थ नियन्ता तथा इसके आदि स्रष्टा भगवान् श्री हरि सूर्य देव के रूप में प्रकट होते हैं। ऋषिगण इस सूर्य देव का वर्णन अनेक रूपों में, उनकी विविध भौतिक उपाधियों के अनुसार करते हैं। जगत को धारण करने के लिए भगवान् अपनी कालशक्ति को सूर्य के रूप में प्रकट करते हैं और अपने संगियों की बारह मंडलियों के साथ चैत्र आदि बारहों मास यात्रा करते रहते हैं। जो कोई सूर्य के रूप में भगवान् श्री हरि के ऐश्वर्यों का स्मरण करता है, वह अपने पापकर्मों के फलों से मुक्त हो जायेगा।

श्रीशौनक उवाच

अथेममर्थं पृच्छामो भवन्तं बहुवित्तमम् ।
समस्ततन्त्रराद्धान्ते भवान्भागवत तत्त्ववित् ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-शौनकः उवाच—श्री शौनक ने कहा; अथ—अब; इमम्—यह; अर्थम्—विषय; पृच्छामः—हम पूछ रहे हैं; भवन्तम्—आप से; बहु-वित्-तमम्—सबसे विस्तृत ज्ञान के स्वामी; समस्त—समस्त; तन्त्र—पूजा की व्यावहारिक विधि बताने वाले शास्त्र; राद्ध-अन्ते—अन्तिम निर्णय; भवान्—आप; भागवत—हे महान् भगवद्भक्त; तत्त्व-वित्—असली तथ्यों के ज्ञाता।

श्री शौनक ने कहा : हे सूत, आप सर्वश्रेष्ठ विद्वान तथा भगवद्भक्त हैं। अतएव अब हम आपसे समस्त तंत्र शास्त्रों के अन्तिम निर्णय के विषय में पूछते हैं।

तान्त्रिकाः परिचर्यायां केवलस्य श्रियः पतेः ।
अङ्गोपाङ्गायुधाकल्पं कल्पयन्ति यथा च यैः ॥ २ ॥
तन्नो वर्णय भद्रं ते क्रियायोगं बुभुत्सताम् ।
येन क्रियानैपुणेन मर्त्यो यायादमर्त्यताम् ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

तान्त्रिकाः—तांत्रिक साहित्य की विधि के अनुयायी; परिचर्यायाम्—नियमित पूजा में; केवलस्य—शुद्ध आत्मा की; श्रियः—लक्ष्मी के; पतेः—पति का; अङ्ग—अंग, यथा पाँव; उपाङ्ग—गौण अंग यथा गरुड़ जैसे संगी; आयुध—हथियार, यथा सुदर्शन चक्र; आकल्पम्—तथा आभूषण यथा कौस्तुभ मणि; कल्पयन्ति—कल्पना करते हैं; यथा—जैसे; च—तथा; यैः—जिससे (भौतिक वस्तुओं से); तत्—वह; नः—हमसे; वर्णय—कृपा करके वर्णन करें; भद्रम्—सर्वमंगल; ते—तुम्हारा; क्रिया-योगम्—अनुशीलन की व्यावहारिक विधि; बुभुत्सताम्—सीखने के लिए उत्सुक; येन—जिससे; क्रिया—क्रमबद्ध अभ्यास में; नैपुणेन—दक्षता; मर्त्यः—मरणशील प्राणी; यायात्—प्राप्त कर सके; अमर्त्यताम्—अमरता।

आपका कल्याण हो, कृपा करके हम जिज्ञासुओं को वह लक्ष्मीपति दिव्य भगवान् की नियमित पूजा द्वारा सम्पन्न की जाने वाली *क्रिया योग* विधि बतलायें। कृपा करके यह भी बतलायें कि भक्तगण उनके अंगों, संगियों, आयुधों तथा आभूषणों की किन विशेष भौतिक वस्तुओं से कल्पना करते हैं। भगवान् की दक्षतापूर्वक पूजा करके मर्त्य प्राणी अमरता प्राप्त कर सकता है।

सूत उवाच
नमस्कृत्य गुरून्वक्ष्ये विभूतीर्वैष्णवीरपि ।
याः प्रोक्ता वेदतन्त्राभ्यामाचार्यैः पद्मजादिभिः ॥ ४॥

शब्दार्थ

सूतः उवाच—सूत गोस्वामी ने कहा; नमस्कृत्य—नमस्कार करके; गुरून्—गुरुओं को; वक्ष्ये—कहूँगा; विभूतीः—ऐश्वर्य; वैष्णवीः—भगवान् विष्णु सम्बन्धी; अपि—निस्सन्देह; याः—जो; प्रोक्ताः—वर्णित होते हैं; वेद-तन्त्राभ्याम्—वेदों तथा तंत्रों द्वारा; आचार्यैः—अधिकारियों द्वारा; पद्मज-आदिभिः—ब्रह्मा इत्यादि द्वारा।

सूत गोस्वामी ने कहा : मैं अपने गुरुओं को नमस्कार करके कमल से उत्पन्न ब्रह्मा आदि महान् विद्वानों द्वारा वेदों तथा तंत्रों में दिये हुए भगवान् के ऐश्वर्यों का वर्णन तुमसे फिर से करूँगा।

मायाद्यैर्नवभिस्तत्त्वैः स विकारमयो विराट् ।
निर्मितो दृश्यते यत्र सचित्के भुवनत्रयम् ॥ ५॥

शब्दार्थ

माया-आद्यैः—प्रकृति की अव्यक्त अवस्था से शुरू करके; नवभिः—नौ; तत्त्वैः—तत्वों से; सः—वह; विकार-मयः—रूपान्तरों वाला भी (ग्यारह इन्द्रियाँ तथा पाँच स्थूल तत्त्व); विराट्—भगवान् का विश्व रूप; निर्मितः—निर्मित; दृश्यते—देखा जाता है; यत्र—जिसमें; स-चित्के—सचेतन होने से; भुवन-त्रयम्—तीनों लोक।

भगवान् का विराट रूप अव्यक्त प्रकृति तथा परवर्ती विकारों आदि से युक्त सृष्टि के नौ मूलभूत तत्त्वों से बना है। एक बार चेतना द्वारा इस विराट रूप को अधिष्ठित करने पर इसमें तीनों लोक दिखाई पड़ने लगते हैं।

तात्पर्य : सृष्टि के नौ मूलभूत तत्त्व हैं—प्रकृति, सूत्र, महत् तत्त्व, मिथ्या अहंकार तथा पाँच सूक्ष्म अनुभूतियाँ (तन्मात्रा)। विकारों में ग्यारह इन्द्रियाँ तथा पाँच स्थूल भौतिक तत्त्व आते हैं।

एतद्वै पौरुषं रूपं भूः पादौ द्यौः शिरो नभः ।
नाभिः सूर्योऽक्षिणी नासे वायुः कर्णौ दिशः प्रभोः ॥ ६ ॥
प्रजापतिः प्रजननमपानो मृत्युरीशितुः ।
तद्बाहवो लोकपाला मनश्चन्द्रो भ्रुवौ यमः ॥ ७ ॥
लज्जोत्तरोऽधरो लोभो दन्ता ज्योत्स्ना स्मयो भ्रमः ।
रोमाणि भूरुहा भूम्नो मेघाः पुरुषमूर्धजाः ॥ ८ ॥

शब्दार्थ

एतत्—यह; वै—निस्सन्देह; पौरुषम्—विराट पुरुष का; रूपम्—रूप; भूः—पृथ्वी; पादौ—उनके पाँव; द्यौः—स्वर्ग; शिरः—उनका शिर; नभः—आकाश; नाभिः—उनकी नाभि; सूर्यः—सूर्य; अक्षिणी—उनके दो नेत्र; नासे—उनके नथुने; वायुः—वायु; कर्णौ—उनके कान; दिशः—दिशाएँ; प्रभोः—भगवान् के; प्रजा-पतिः—प्रजनन का देवता; प्रजननम्—उनका प्रजनन अंग; अपानः—उनकी गुदा; मृत्युः—मृत्यु; ईशितुः—परम नियन्ता का; तत्-बाहवः—उनकी अनेक भुजाएँ; लोक-पालाः—विभिन्न लोकों के अधिष्ठाता; मनः—उनका मन; चन्द्रः—चन्द्रमा; भ्रुवौ—उनकी भौंहें; यमः—यमराज; लज्जा—लज्जा; उत्तरः—उनका ऊपरी होठ; अधरः—उनका निचला होठ; लोभः—लालच; दन्ताः—उनके दाँत; ज्योत्स्ना—चाँदनी; स्मयः—उनकी मुसकान; भ्रमः—भ्रम; रोमाणि—उनके रोएँ; भू-रुहाः—वृक्ष; भूम्नः—सर्वशक्तिमान प्रभु के; मेघाः—बादल; पुरुष—विराट पुरुष के; मूर्ध-जाः—सिर के बाल।

यह भगवान् का विराट रूप है, जिसमें पृथ्वी उनके पाँव, आकाश उनकी नाभि, सूर्य उनकी आँखें, वायु उनके नथुने, प्रजापति उनके जननांग, मृत्यु उनकी गुदा तथा चन्द्रमा उनका मन है। स्वर्गलोक उनका शिर, दिशाएँ उनके कान तथा विभिन्न लोकपाल उनकी अनेक भुजाएँ हैं। यमराज उनकी भौंहे, लज्जा उनका निचला होठ, लालच उनका ऊपरी होठ, भ्रम उनकी मुसकान तथा चाँदनी उनके दाँत है, जबकि वृक्ष उन सर्वशक्तिमान पुरुष के शरीर के रोम हैं और बादल उनके शिर के बाल हैं।

तात्पर्य : भौतिक जगत के विविध पक्ष, यथा पृथ्वी, सूर्य तथा वृक्ष भगवान् के विराट शरीर के विविध अंगों द्वारा पालित-पोषित हैं। इसलिए वे उनसे अभिन्न माने जाते हैं, जैसाकि इस श्लोक में वर्णन आया है। ये सभी ध्यान के निमित्त हैं।

यावानयं वै पुरुषो यावत्या संस्थया मितः ।
तावानसावपि महापुरुषो लोकसंस्थया ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

यावान्—जिस विस्तार तक; अयम्—यह; वै—निस्सन्देह; पुरुषः—सामान्य व्यक्ति; यावत्या—जिस आकार तक; संस्थया—उसके अंगों की स्थिति द्वारा; मितः—मापित; तावान्—उसी विस्तार तक; असौ—वह; अपि—भी; महा-पुरुषः—दिव्य पुरुष; लोक-संस्थया—लोकों की स्थितियों के अनुसार।

जिस तरह इस जगत के सामान्य पुरुष के आकार-प्रकार को उसके विविध अंगों को माप कर निश्चित किया जा सकता है, उसी तरह महापुरुष के विराट रूप के अन्तर्गत लोकों की व्यवस्था को माप कर महापुरुष का आकार-प्रकार जाना जा सकता है।

कौस्तुभव्यपदेशेन स्वात्मज्योतिर्बिभर्त्यजः ।
तत्प्रभा व्यापिनी साक्षात्श्रीवत्समुरसा विभुः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

कौस्तुभ-व्यपदेशेन—कौस्तुभ मणि द्वारा प्रदर्शित; स्व-आत्म—शुद्ध जीवात्मा का; ज्योतिः—आध्यात्मिक प्रकाश; बिभर्ति—वहन करता है; अजः—अजन्मा ईश्वर; तत्-प्रभा—इस (कौस्तुभ मणि) का तेज; व्यापिनी—विस्तृत; साक्षात्—प्रत्यक्ष; श्रीवत्सम्—श्रीवत्स चिह्न का; उरसा—उनके वक्षस्थल पर; विभुः—सर्वशक्तिमान।

सर्वशक्तिमान अजन्मा भगवान् अपने वक्षस्थल पर शुद्ध आत्मा का प्रतिनिधित्व करने वाला कौस्तुभ मणि और उसी के साथ इस मणि के विस्तृत तेज का प्रत्यक्ष स्वरूप, श्रीवत्स चिह्न, धारण करते हैं।

स्वमायां वनमालाख्यां नानागुणमयीं दधत् ।
वासश्छन्दोमयं पीतं ब्रह्मसूत्रं त्रिवृत्स्वरम् ॥ ११ ॥
बिभर्ति साङ्ख्यं योगं च देवो मकरकुण्डले ।
मौलिं पदं पारमेष्ठ्यं सर्वलोकाभयङ्करम् ॥ १२ ॥

शब्दार्थ

स्व-मायाम्—अपनी माया; वन-माला-आख्याम्—फूल की माला कहलाने वाली; नाना-गुण—प्रकृति के गुणों के विविध मेल; मयीम्—से बनी; दधत्—पहने हुए; वासः—उनका वस्त्र; छन्दः-मयम्—वैदिक छन्दों से युक्त; पीतम्—पीला; ब्रह्म-सूत्रम्—उनका जनेऊ; त्रि-वृत्—तेहरा; स्वरम्—ॐकार नामक पवित्र ध्वनि; बिभर्ति—धारण करते हैं; साङ्ख्यम्—सांख्य विधि; योगम्—योग-विधि; च—तथा; देवः—स्वामी; मकर-कुण्डले—मगर की आकृति वाले कान के कुंडल; मौलिम्—उनका मुकुट; पदम्—पद; पारमेष्ठ्यम्—परम (ब्रह्मा का); सर्व-लोक—सारे जगतों को; अभयम्—अभय; करम्—देने वाले।

उनकी फूल-माला उनकी भौतिक माया है, जो प्रकृति के गुणों के विविध मेलों से युक्त है। उनका पीत वस्त्र वैदिक छन्द हैं और उनका जनेऊ तीन ध्वनियों वाला ॐ अक्षर है। अपने दो मकराकृत कुण्डलों के रूप में भगवान् सांख्य तथा योग की विधियाँ धारण करते हैं। उनका मुकुट जो सारे लोकवासियों को अभय प्रदान करता है, ब्रह्मलोक का परम पद है।

अव्याकृतमनन्ताख्यमासनं यदधिष्ठितः ।
धर्मज्ञानादिभिर्युक्तं सत्त्वं पद्ममिहोच्यते ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

अव्याकृतम्—सृष्टि की अव्यक्त अवस्था; अनन्त-आख्यम्—अनन्त कहलाने वाली; आसनम्—उनका आसन; यत्-अधिष्ठितः—जिस पर वे बैठे हुए हैं; धर्म-ज्ञान-आदिभिः—धर्म, ज्ञान इत्यादि के साथ; युक्तम्—जुड़ा हुआ; सत्त्वम्—सतोगुणमें; पद्मम्—उनका कमल; इह—उस पर; उच्यते—कहा जाता है।

भगवान् का आसन, अनन्त, भौतिक प्रकृति की अव्यक्त अवस्था है और भगवान् का कमल सिंहासन, सतोगुण है, जो धर्म तथा ज्ञान से समन्वित है।

ओजःसहोबलयुतं मुख्यतत्त्वं गदां दधत् ।
अपां तत्त्वं दरवरं तेजस्तत्त्वं सुदर्शनम् ॥ १४॥
नभोनिभं नभस्तत्त्वमसिं चर्म तमोमयम् ।
कालरूपं धनुः शार्ङ्गं तथा कर्ममयेषुधिम् ॥ १५॥

शब्दार्थ

ओजः-सहः-बल—इन्द्रियों के, मन के तथा शरीर के बल से; युतम्—युक्त; मुख्य-तत्त्वम्—मुख्य तत्त्व वायु जो भौतिक शरीर के भीतर प्राणशक्ति है; गदाम्—उनकी गदा; दधत्—धारण किये; अपाम्—जल का; तत्त्वम्—तत्व; दर—उनका शंख; वरम्—उत्तम; तेजः-तत्त्वम्—अग्नि तत्त्व; सुदर्शनम्—सुदर्शन चक्र; नभः-निभम्—आकाश के समान; नभः-तत्त्वम्—आकाश तत्त्व; असिम्—उनकी तलवार; चर्म—ढाल; तमः-मयम्—तमोगुण से बनी; काल-रूपम्—काल के रूप में प्रकट; धनुः—उनका धनुष; शार्ङ्गम्—शार्ङ्ग नामक; तथा—तथा; कर्म-मय—सक्रिय इन्द्रिय रूप; इषु-धिम्—तरकस।

भगवान् की गदा इन्द्रिय, मन, शरीर सम्बन्धी शक्तियों से युक्त मुख्य तत्त्व प्राण है। उनका उत्तम शंख जल तत्त्व है। उनका सुदर्शन चक्र अग्नि तत्त्व है और उनकी तलवार जोकि आकाश के समान निर्मल है, आकाश तत्त्व है। उनकी ढाल तमोगुण, उनका शाङ्र्ग नामक धनुष काल तथा उनका तरकस कर्मेन्द्रियाँ हैं।

इन्द्रियाणि शरानाहुराकूतीरस्य स्यन्दनम् ।
तन्मात्राण्यस्याभिव्यक्तिं मुद्रयार्थक्रियात्मताम् ॥ १६॥

शब्दार्थ

इन्द्रियाणि—इन्द्रियाँ; शरान्—उनके तीर; आहुः—कहते हैं; आकूतीः—(मन अपने) सक्रिय कर्म सहित; अस्य—उनका; स्यन्दनम्—रथ; तत्-मात्राणि—अनुभूति की वस्तुएँ; अस्य—उनका; अभिव्यक्तिम्—बाह्य स्वरूप; मुद्रया—हाथ के इशारों द्वारा (वर देने, अभय देने आदि के लिए); अर्थ-क्रिया-आत्मताम्—सार्थक क्रिया का सार।

उनके बाण इन्द्रियाँ हैं और उनका रथ चंचल वेगवान मन है। उनका बाह्य स्वरूप तन्मात्राएँ हैं और उनके हाथ के इशारे (मुद्राएँ) सार्थक क्रिया के सार हैं।

तात्पर्य : समस्त क्रिया का लक्ष्य अन्ततः जीवन की परम सिद्धि है और यह सिद्धि भगवान् के कृपालु हाथों द्वारा प्रदान की जाती है। भगवान् की मुद्राएँ भक्त के हृदय से सारा भय दूर करके उसे वैकुण्ठ में भगवान् का सान्निध्य दिलाने वाली होती हैं।

मण्डलं देवयजनं दीक्षा संस्कार आत्मनः ।
परिचर्या भगवत आत्मनो दुरितक्षयः ॥ १७॥

शब्दार्थ

मण्डलम्—सूर्य मंडल; देव-यजनम्—वह स्थान जहाँ परमेश्वर की पूजा होती है; दीक्षा—दीक्षा; संस्कारः—संस्कार; आत्मनः—आत्मा के लिए; परिचर्या—भक्ति; भगवतः—भगवान् की; आत्मनः—जीवात्मा के लिए; दुरित—पापों का; क्षयः—विनाश।

सूर्य मण्डल ही वह स्थान है जहाँ भगवान् पूजे जाते हैं; दीक्षा ही आत्मा की शुद्धि का साधन है और भगवान् की भक्ति करना ही किसी के पापों को समूल नष्ट करने की विधि है।

तात्पर्य : मनुष्य को अग्निमय सूर्य मण्डल का ध्यान ऐसे स्थान के रूप में करना चाहिए जहाँ ईश्वर की पूजा होती है। भगवान् कृष्ण समस्त तेज के आगार हैं इसलिए यह युक्तियुक्त है कि उनकी पूजा तेजोमय सूर्य में की जाय।

भगवान्भगशब्दार्थं लीलाकमलमुद्वहन् ।
धर्मं यशश्च भगवांश्चामरव्यजनेऽभजत् ॥ १८ ॥

शब्दार्थ

भगवान्—भगवान्; भग-शब्द—भग शब्द का; अर्थम्—अर्थ (ऐश्वर्य); लीला-कमलम्—उनका लीला कमल; उद्वहन्—धारण करते हुए; धर्मम्—धर्म; यशः—यश; च—तथा; भगवान्—भगवान् ने; चामर-व्यजने—चामर के दो पंखे; अभजत्—स्वीकार किया है।

लीलाकमल को जोकि भग शब्द से विभिन्न ऐश्वर्यों का सूचक है सहज रूप में धारण करते हुए भगवान्, धर्म तथा यश रूपी दो चामरों से सेवित हैं।

आतपत्रं तु वैकुण्ठं द्विजा धामाकुतोभयम् ।
त्रिवृद्वेदः सुपर्णाख्यो यज्ञं वहति पूरुषम् ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

आतपत्रम्—उनका छाता; तु—तथा; वैकुण्ठम्—वैकुण्ठ; द्विजाः—हे ब्राह्मणो; धाम—उनका निजी धाम; अकुतः-भयम्—भय से रहित; त्रि-वृत्—तीन; वेदः—वेद; सुपर्ण-आख्यः—सुपर्ण या गरुड़ नामक; यज्ञम्—साक्षात् यज्ञ; वहति—वहन करता है; पूरुषम्—भगवान् को।

हे ब्राह्मणो, भगवान् का छाता उनका धाम वैकुण्ठ है जहाँ कोई भय नहीं है और यज्ञ के स्वामी को ले जाने वाला गरुड़, तीनों वेद हैं।

अनपायिनी भगवती श्रीः साक्षादात्मनो हरेः ।
विष्वक्षेनस्तन्त्रमूर्तिर्विदितः पार्षदाधिपः ।
नन्दादयोऽष्टौ द्वाःस्थाश्च तेऽणिमाद्या हरेर्गुणाः ॥ २० ॥

शब्दार्थ

अनपायिनी—पृथक् न की जा सकने वाली; भगवती—लक्ष्मी; श्रीः—श्री; साक्षात्—प्रत्यक्ष; आत्मनः—अन्तरंगा प्रकृति का; हरेः—हरि का; विष्वक्सेनः—विष्वक्सेन; तन्त्र-मूर्तिः—तंत्र शास्त्रों के रूप में; विदितः—ज्ञात है; पार्षद-अधिपः—उनके निजी संगियों का प्रधान; नन्द-आदयः—नन्द इत्यादि; अष्टौ—आठ; द्वाः-स्थाः—द्वारपाल; च—तथा; ते—वे; अणिमा-आद्याः—अणिमा तथा अन्य सिद्धियाँ; हरेः—भगवान् के; गुणाः—गुण।

भगवती श्री, जो भगवान् का संग कभी नहीं छोड़तीं, उनके साथ उनकी अन्तरंगा शक्ति के रूप में इस जगत में प्रकट होती हैं। विष्वक्सेन जोकि भगवान् के निजी संगियों में प्रमुख हैं, पंचरात्र तथा अन्य तंत्रों के रूप में विख्यात हैं। और नन्द आदि भगवान् के आठ द्वारपाल

उनकी अणिमादिक योगसिद्धियाँ हैं।

तात्पर्य : श्रील जीव गोस्वामी के अनुसार लक्ष्मीजी समस्त ऐश्वर्य की आदि स्रोत हैं। भौतिक प्रकृति का नियंत्रण भगवान् की अपरा शक्ति, महामाया, द्वारा होता है, जबकि लक्ष्मीजी उनकी अन्तरंगा परा शक्ति हैं। फिर भी, भगवान् की अपरा प्रकृति के ऐश्वर्य का स्रोत लक्ष्मी का परम आध्यात्मिक ऐश्वर्य है। *श्री हयशीर्ष पञ्चरात्र* में कहा गया है—

परमात्मा हरिर्देवस्तच्छक्तिः श्रीरिहोदिता।
श्रीर्देवी प्रकृतिः प्रोक्ता केशवः पुरुषः स्मृतः।
न विष्णुना विना देवी न हरिः पद्मजां विना।

''परमात्मा भगवान् हरि हैं और उनकी शक्ति इस जगत में श्री कहलाती है। देवी श्री *प्रकृति* के नाम से विख्यात हैं और परम भगवान् केशव *पुरुष* नाम से विख्यात हैं। यह दिव्य देवी न तो उनके बिना कभी रहती हैं न ही वे उनके बिना कभी प्रकट होते हैं।''

श्री विष्णु पुराण में भी (१.८.१५) कहा गया है—

नित्यैव स जगन्माता विष्णोः श्रीरनपायिनी।
यथा सर्वगतो विष्णुस्तथैवेयं द्विजोत्तमाः॥

''वे ब्रह्माण्ड की शाश्वत माता, भगवान् विष्णु की लक्ष्मी हैं और वे उनसे कभी भी पृथक् नहीं होतीं। हे ब्राह्मण-श्रेष्ठो! भगवान् विष्णु की ही तरह वे भी सर्वत्र उपस्थित हैं।''

विष्णु पुराण में ही (१.९.१४०) आया है—

एवं यथा जगत्स्वामी देवदेवो जनार्दनः।
अवतारं करोत्येव तथा श्रीस्तत्सहायिनी॥

''जिस तरह ईश्वरों के ईश्वर, ब्रह्माण्ड के स्वामी जनार्दन इस जगत में अवतरित होते हैं, उसी तरह उनकी प्रिया लक्ष्मी भी अवतरित होती हैं।''

स्कन्द पुराण में लक्ष्मीजी के शुद्ध आध्यात्मिक पद का वर्णन मिलता है—

अपरं त्वक्षरं या सा प्रकृतिर्जडरूपिका।
श्रीः परा प्रकृतिः प्रोक्ता चेतना विष्णुसंश्रया॥
तं अक्षरं परं प्राहुः परतः परम् अक्षरम्।
हरिरेवाखिलगुणोऽपि अक्षरत्रयमीरितम्॥

''अपर अक्षर वह प्रकृति है, जो भौतिक जगत के रूप में प्रकट होती है। किन्तु लक्ष्मीजी परा प्रकृति कहलाती हैं। वे शुद्ध चेतना हैं और भगवान् विष्णु की प्रत्यक्ष शरण में रहती हैं। यद्यपि वे परा अच्युता कहलाती हैं किन्तु बड़े से बड़े अच्युत स्वयं भगवान् हरि हैं, जो समस्त दिव्य गुणों के आदि स्वामी हैं। इस तरह तीन स्पष्ट अच्युत वर्णित हैं।''

इस तरह यद्यपि भगवान् की अपरा शक्ति अपने कार्य में अच्युत है किन्तु क्षणिक मायामय ऐश्वर्यों को प्रदर्शित करने की उसकी शक्ति परमेश्वर की प्रिया लक्ष्मी, जोकि अन्तरंगा शक्ति हैं, की

सौजन्य से विद्यमान है।

पद्म पुराण (२५६.९-२१) में भगवान् के अठारह द्वारपालों की सूची प्राप्त है—नन्द, सुनन्द, जय, विजय, चण्ड, प्रचण्ड, भद्र, सुभद्र, धाता, विधाता, कुमुद, कुमुदाक्ष, पुण्डरीक्ष, वामन, शंकुकर्ण, सर्वनेत्र, सुमुख तथा सुप्रतिष्ठित।

वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नः पुरुषः स्वयम् ।
अनिरुद्ध इति ब्रह्मन्मूर्तिव्यूहोऽभिधीयते ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नः—वासुदेव, संकर्षण तथा प्रद्युम्न; पुरुषः—भगवान्; स्वयम्—स्वयं; अनिरुद्धः—अनिरुद्ध; इति—इस प्रकार; ब्रह्मन्—हे ब्राह्मण, शौनक; मूर्ति-व्यूहः—साकार रूपों के अंश; अभिधीयते—कहलाती है।

हे ब्राह्मण शौनक, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध—ये भगवान् के साक्षात् अंशों (चतुर्व्यूह) के नाम हैं।

स विश्वस्तैजसः प्राज्ञस्तुरीय इति वृत्तिभिः ।
अर्थेन्द्रियाशयज्ञानैर्भगवान्परिभाव्यते ॥ २२ ॥

शब्दार्थ

सः—वह; विश्वः तैजसः प्राज्ञः—जाग्रत, सुप्त तथा सुषुप्त रूप; तुरीयः—चौथी, दिव्य अवस्था; इति—इस तरह कहे गये; वृत्तिभिः—कार्यों द्वारा; अर्थ—इन्द्रिय-विषय; इन्द्रिय—मन; आशय—आवृत चेतना; ज्ञानैः—तथा आध्यात्मिक ज्ञान के द्वारा; भगवान्—भगवान्; परिभाव्यते—कल्पित किये जाते हैं।

मनुष्य भगवान् की कल्पना जाग्रत, सुप्त तथा सुषुप्त अवस्थाओं में कर सकता है, जो क्रमशः बाह्य वस्तुओं, मन तथा भौतिक बुद्धि के माध्यम से कार्य करती हैं। एक चौथी अवस्था भी है, जो चेतना का दिव्य स्तर है और शुद्ध ज्ञान के लक्षण वाली है।

अङ्गोपाङ्गायुधाकल्पैर्भगवांस्तच्चतुष्टयम् ।
बिभर्ति स्म चतुर्मूर्तिर्भगवान्हरिरीश्वरः ॥ २३ ॥

शब्दार्थ

अङ्ग—अपने प्रमुख अंगों; उपाङ्ग—गौण अंगों; आयुध—हथियारों; आकल्पैः—तथा आभूषणों से; भगवान्—भगवान्; तत् चतुष्टयम्—ये चार स्वरूप (विश्व, तैजस, प्राज्ञ तथा तुरीय); बिभर्ति—धारण करता है; स्म—निस्सन्देह; चतुः-मूर्तिः—अपने चार साकार रूपों (वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध); भगवान्—भगवान्; हरिः—हरि; ईश्वरः—परम नियन्ता।

इस प्रकार भगवान् हरि चार साकार अंशों (मूर्तियों) के रूप में प्रकट होते हैं जिनमें से हर अंश प्रमुख अंग, गौण अंग, आयुध तथा आभूषण से युक्त होता है। इन स्पष्ट स्वरूपों से भगवान् चार अवस्थाओं को बनाये रखते हैं।

तात्पर्य : भगवान् का आध्यात्मिक शरीर, आयुध, आभूषण तथा संगी—ये सभी शुद्ध और दिव्य हैं और उनसे अभिन्न हैं।

द्विजऋषभ स एष ब्रह्मयोनिः स्वयंदृक्
स्वमहिमपरिपूर्णो मायया च स्वयैतत् ।
सृजति हरति पातीत्याख्ययानावृताक्षो
विवृत इव निरुक्तस्तत्परैरात्मलभ्यः ॥ २४॥

शब्दार्थ

द्विज-ऋषभ—हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ; सः एषः—एकमात्र वही; ब्रह्म-योनिः—वेदों के स्रोत; स्वयम्-दृक्—आत्म-प्रकाशित; स्व-महिम—अपनी महिमा में; परिपूर्णः—अच्छी तरह से पूर्ण; मायया—माया द्वारा; च—तथा; स्वया—अपनी; एतत्—यह ब्रह्माण्ड; सृजति—रचता है; हरति—हर लेता है; पाति—पालन करता है; इति आख्यया—इस तरह से कल्पित; अनावृत—खुला; अक्षः—उसकी दिव्य चेतना; विवृतः—विभक्त; इव—मानो; निरुक्तः—वर्णित; तत्-परैः—उनके द्वारा जो उनके भक्त हैं; आत्म—उनके आत्मा रूप; लभ्यः—प्राप्त होने वाले।

हे ब्राह्मण-श्रेष्ठ, एकमात्र वे ही आत्म-प्रकाशित, वेदों के आदि स्रोत, पूर्ण तथा अपनी महिमा में पूर्ण हैं। वे अपनी मायाशक्ति से इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का सृजन, पालन तथा संहार करते हैं। चूँकि वे विविध भौतिक कार्यों के कर्ता हैं अतएव कभी कभी उन्हें विभक्त कहा जाता है फिर भी वे शुद्ध ज्ञान में स्थित बने रहते हैं। जो लोग उनकी भक्ति में लगे हुए हैं, वे उन्हें अपनी असली आत्मा के रूप में अनुभव कर सकते हैं।

तात्पर्य : श्रील विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर की संस्तुति है कि हम निम्नलिखित ध्यान द्वारा विनीत बनें—''मुझे सदैव दिखने वाली पृथ्वी मेरे भगवान् के चरणकमलों का अंश है, जो सदैव ध्यातव्य हैं। समस्त चर तथा अचर प्राणियों ने पृथ्वी की शरण ले रखी है, अतः वे मेरे भगवान् के चरणकमलों में ही शरण पाते हैं। इस कारण मुझे हर जीव का आदर करना चाहिए, किसी से द्वेष नहीं रखना चाहिए। वस्तुतः सारे जीव मेरे प्रभु के वक्षस्थल के कौस्तुभ मणि हैं। इसलिए मैं किसी जीव से न तो ईर्ष्या करूँगा न उसका मजाक उड़ाऊँगा।'' इस ध्यान का अभ्यास करके मनुष्य जीवन में सफल बन सकता है।

श्रीकृष्ण कृष्णसख वृष्ण्यृषभावनिध्रु-
ग्राजन्यवंशदहनानपवर्गवीर्य ।
गोविन्द गोपवनिताव्रजभृत्यगीत-
तीर्थश्रवः श्रवणमङ्गल पाहि भृत्यान् ॥ २५॥

शब्दार्थ

श्री-कृष्ण—हे श्रीकृष्ण; कृष्ण-सख—हे अर्जुन के मित्र; वृष्णि—वृष्णिवंशी के; ऋषभ—हे प्रमुख; अवनि—पृथ्वी पर; ध्रुक्—विद्रोही; राजन्य-वंश—राजवंशों के; दहन—हे संहारक; अनपवर्ग—बिना ह्रास के; वीर्य—जिसका पराक्रम; गोविन्द—हे गोलोक धाम के स्वामी; गोप—ग्वालों के; वनिता—तथा गोपियाँ; व्रज—समूह; भृत्य—तथा उनके सेवक; गीत—गाया हुआ; तीर्थ—पवित्र, जिस तरह तीर्थस्थान होते हैं; श्रवः—जसिका यश; श्रवण—जिसके विषय में सुनने के लिए; मङ्गल—शुभ; पाहि—कृपया रक्षा करें; भृत्यान्—अपने सेवकों की।

हे कृष्ण, हे अर्जुन के सखा, हे वृष्णिवंशियों के प्रमुख, आप इस पृथ्वी पर उत्पात

मचाने वाले राजनीतिक दलों के संहारक हैं। आपका पराक्रम कभी घटता नहीं। आप दिव्य धाम के स्वामी हैं और आपकी पवित्र महिमा जो वृन्दावन के गोपों, गोपियों तथा उनके सेवकों द्वारा गाई जाती है, सुनने मात्र से सर्वमंगलदायिनी है। हे प्रभु, आप अपने भक्तों की रक्षा करें।

य इदं कल्य उत्थाय महापुरुषलक्षणम् ।
तच्चित्तः प्रयतो जप्त्वा ब्रह्म वेद गुहाशयम् ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

यः—जो कोई; इदम्—इसे; कल्ये—प्रातःकाल; उत्थाय—उठ कर; महा-पुरुष-लक्षणम्—विश्व रूप भगवान् के लक्षण; तत्-चित्तः—उनमें लीन मन; प्रयतः—शुद्ध हुआ; जप्त्वा—अपने आप जप करके; ब्रह्म—परब्रह्म; वेद—जान पाता है; गुहा-शयम्—हृदय के भीतर स्थित।

जो कोई प्रातःकाल जल्दी उठता है और शुद्ध मन को महापुरुष में स्थिर करके, उनके गुणों का यह वर्णन मन ही मन जपता है, वह उन्हें अपने हृदय के भीतर निवास करने वाले परब्रह्म के रूप में अनुभव करेगा।

श्रीशौनक उवाच

शुको यदाह भगवान्विष्णुराताय शृण्वते ।
सौरो गणो मासि मासि नाना वसति सप्तकः ॥ २७ ॥
तेषां नामानि कर्माणि नियुक्तानामधीश्वरैः ।
ब्रूहि नः श्रद्दधानानां व्यूहं सूर्यात्मनो हरेः ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

श्री-शौनकः उवाच—श्री शौनक ने कहा; शुकः—शुकदेव गोस्वामी ने; यत्—जो; आह—वर्णन किया; भगवान्—महामुनि; विष्णु-राताय—राजा परीक्षित से; शृण्वते—सुन रहे; सौरः—सूर्य देव के; गणः—संगी; मासि मासि—प्रत्येक मास में; नाना—विविध; वसति—निवास करता है; सप्तकः—सात का समूह; तेषाम्—उनमें से; नामानि—नाम; कर्माणि—कर्म; नियुक्तानाम्—लगे हुए; अधीश्वरैः—अपने नियन्ता सूर्य देव के विविध स्वरूपों से; ब्रूहि—कृपा करके कहें; नः—हमसे; श्रद्दधानानाम्—श्रद्धालुओं के; व्यूहम्—स्वांशों; सूर्य-आत्मनः—सूर्य देव के रूप में उनके निजी अंश में; हरेः—भगवान् हरि का।

श्री शौनक ने कहा : कृपया आपके वचनों में अत्यन्त श्रद्धा रखने वाले हमसे उन सात साकार रूपों तथा संगियों के विभिन्न समूहों का वर्णन उनके नामों तथा कार्यों समेत करें जिन्हें सूर्य देव प्रति मास प्रदर्शित करते हैं। सूर्य देव के संगी, जो अपने स्वामी की सेवा करते हैं, सूर्य देव के अधिष्ठाता देवता के रूप में भगवान् हरि के स्वांश हैं।

तात्पर्य : शुकदेव गोस्वामी तथा राजा परीक्षित की उच्च वार्ता का विवरण सुनने के बाद अब शौनक भगवान् के अंश रूप सूर्य के विषय में पूछताछ करते हैं। यद्यपि सूर्य सारे ग्रहों के स्वामी हैं, किन्तु श्री शौनक भगवान् श्री हरि के अंश रूप इस तेजस्वी मंडल में विशेष रुचि दिखाते हैं।

सूर्य से सम्बद्ध पुरुष सात प्रकार के हैं। सूर्य की कक्षा के मार्ग में बारह मास होते हैं और हर

मास में एक पृथक् सूर्य देव तथा उनके छः संगियों का समूह अध्यक्षता करता है। वैशाख से प्रारम्भ करके बारहों महीनों में से हर एक के लिए सूर्य देव, ऋषि, यक्ष, गन्धर्व, अप्सरा, राक्षस तथा नाग के विभिन्न नाम होते हैं। इस तरह कुल सात प्रकार बन जाते हैं।

सूत उवाच
अनाद्यविद्यया विष्णोरात्मनः सर्वदेहिनाम् ।
निर्मितो लोकतन्त्रोऽयं लोकेषु परिवर्तते ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

सूतः उवाच—सूत गोस्वामी ने कहा; अनादि—जिसका आदि न हो; अविद्यया—माया द्वारा; विष्णोः—भगवान् विष्णु की; आत्मनः—परमात्मा रूप; सर्व-देहिनाम्—सारे देहधारी जीवों का; निर्मितः—उत्पन्न किया; लोक-तन्त्रः—लोकों के नियामक; अयम्—इस; लोकेषु—लोकों के बीच; परिवर्तते—भ्रमण करता है।

सूत गोस्वामी ने कहा : सूर्य समस्त ग्रहों के बीच भ्रमण करता है और उनकी गतियों को नियमित करता है। इसे समस्त देहधारियों के परमात्मा, भगवान् विष्णु, ने अपनी अनादि भौतिक शक्ति के द्वारा उत्पन्न किया है।

एक एव हि लोकानां सूर्य आत्मादिकृद्धरिः ।
सर्ववेदक्रियामूलमृषिभिर्बहुधोदितः ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

एकः—एक; एव—एकमात्र; हि—निस्सन्देह; लोकानाम्—सारे जगतों के; सूर्यः—सूर्य; आत्मा—आत्मा; आदि-कृत्—आदि स्त्रष्टा; हरिः—भगवान् हरि; सर्व-वेद—सारे वेदों में; क्रिया—कर्मकाण्ड का; मूलम्—आधार; ऋषिभिः—ऋषियों द्वारा; बहुधा—विविध प्रकार से; उदितः—नाम दिये।

भगवान् हरि से अभिन्न होने के कारण सूर्य देव सारे जगतों तथा उनके आदि स्त्रष्टा की अकेली आत्मा हैं। वे वेदों द्वारा बताये गये समस्त कर्मकाण्ड के उद्गम हैं और वैदिक ऋषियों ने उन्हें तरह-तरह के नाम दिये हैं।

कालो देशः क्रिया कर्ता करणं कार्यमागमः ।
द्रव्यं फलमिति ब्रह्मन्नवधोक्तोऽजया हरिः ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

कालः—काल; देशः—स्थान; क्रिया—उद्योग; कर्ता—करने वाला; करणम्—उपकरण; कार्यम्—अनुष्ठान; आगमः—शास्त्र; द्रव्यम्—साज-सामग्री; फलम्—फल; इति—इस प्रकार; ब्रह्मन्—हे ब्राह्मण शौनक; नवधा—नौ प्रकार की; उक्तः—वर्णित; अजया—माया के रूप में; हरिः—भगवान् हरि।

हे शौनक, माया का स्त्रोत होने से भगवान् हरि के अंश रूप सूर्य देव को नौ प्रकार से—काल, देश, क्रिया, कर्ता, उपकरण, अनुष्ठान, शास्त्र, पूजा की साज-सामग्री तथा प्राप्तव्य फल के अनुसार—वर्णित किया गया है।

मध्वादिषु द्वादशसु भगवान्कालरूपधृक् ।
लोकतन्त्राय चरति पृथग्द्वादशभिर्गणैः ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

मधु-आदिषु—मधु इत्यादि; द्वादशसु—बारहों (महीनों) में; भगवान्—भगवान्; काल-रूप—काल के रूप में; धृक्—धारण करके; लोक-तन्त्राय—ग्रहों की गति को नियमित करने के लिए; चरति—यात्रा करता है; पृथक्—अलग से; द्वादशभिः—बारह; गणैः—संगियों समेत।

भगवान् अपनी कालशक्ति को सूर्य देव के रूप में प्रकट करके मधु इत्यादि बारहों महीनों में ब्रह्माण्ड के भीतर ग्रह की गति को नियमित करने हेतु इधर-उधर यात्रा करते हैं। बारहों महीनों सूर्य देव के साथ यात्रा करने वाला छह संगियों का पृथक्-पृथक् समूह है।

धाता कृतस्थली हेतिर्वासुकी रथकृन्मुने ।
पुलस्त्यस्तुम्बुरुरिति मधुमासं नयन्त्यमी ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

धाता कृतस्थली हेतिः—धाता, कृतस्थली तथा हेति; वासुकिः रथकृत्—वासुकि तथा रथकृत; मुने—हे मुनि; पुलस्त्यः तुम्बुरुः—पुलस्त्य तथा तुम्बुरु; इति—इस प्रकार; मधु-मासम्—मधु मास (चैत्र); नयन्ति—आगे ले जाते हैं; अमी—ये।

हे मुनि, मधु मास को, धाता सूर्य देव के रूप में, कृतस्थली अप्सरा रूप में, हेति राक्षस रूप में, वासुकि नाग के रूप में, रथकृत यक्ष रूप में, पुलस्त्य मुनि रूप में तथा तुम्बुरु गन्धर्व के रूप में, नियंत्रित करते हैं।

अर्यमा पुलहोऽथौजाः प्रहेतिः पुञ्जिकस्थली ।
नारदः कच्छनीरश्च नयन्त्येते स्म माधवम् ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

अर्यमा पुलहः अथौजाः—अर्यमा, पुलह तथा अथौजा; प्रहेतिः पुञ्जिकस्थली—प्रहेति तथा पुञ्जिकस्थली; नारदः कच्छनीरः—नारद तथा कच्छनीर; च—भी; नयन्ति—शासन करते हैं; एते—ये; स्म—निस्सन्देह; माधवम्—माधव (वैशाख) मास में।

माधव मास पर, अर्यमा सूर्य, पुलह मुनि, अथौजा यक्ष, प्रहेति राक्षस, पुञ्जिकस्थली अप्सरा, नारद गंधर्व तथा कच्छनीर नाग के रूप में, शासन करते हैं।

मित्रोऽत्रिः पौरुषेयोऽथ तक्षको मेनका हहाः ।
रथस्वन इति ह्येते शुक्रमासं नयन्त्यमी ॥ ३५ ॥

शब्दार्थ

मित्रः अत्रिः पौरुषेयः—मित्र, अत्रि तथा पौरुषेय; अथ—भी; तक्षकः मेनका हहाः—तक्षक, मेनका तथा हाहा; रथस्वनः—रथस्वन; इति—इस प्रकार; हि—निस्सन्देह; एते—ये; शुक्र-मासम्—शुक्र (ज्येष्ठ) मास; नयन्ति—शासन चलाते हैं; अमी—ये।

शुक्र मास पर, मित्र सूर्य देव, अत्रि मुनि, पौरुषेय राक्षस, तक्षक नाग, मेनका अप्सरा,

हहा गन्धर्व तथा रथस्वन यक्ष के रूप में, शासन चलाते हैं।

वसिष्ठो वरुणो रम्भा सहजन्यस्तथा हुहूः ।
शुक्रश्चित्रस्वनश्चैव शुचिमासं नयन्त्यमी ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

वसिष्ठः वरुणः रम्भा—वशिष्ठ, वरुण तथा रम्भा; सहजन्यः—सहजन्य; तथा—भी; हुहूः—हूहू; शुक्रः चित्रस्वनः—शुक्र तथा चित्रस्वन; च एव—भी; शुचि-मासम्—शुचि (आषाढ़) मास; नयन्ति—शासन चलाते हैं; अमी—ये।

शुचि मास पर, वसिष्ठ ऋषि, वरुण सूर्य देव, रम्भा अप्सरा, सहजन्य राक्षस, हूहू गन्धर्व, शुक्र नाग तथा चित्रस्वन यक्ष रूप में, शासन करते हैं।

इन्द्रो विश्वावसुः श्रोता एलापत्रस्तथाङ्गिराः ।
प्रम्लोचा राक्षसो वर्यो नभोमासं नयन्त्यमी ॥ ३७॥

शब्दार्थ

इन्द्रः विश्वावसुः श्रोताः—इन्द्र, विश्वावसु तथा श्रोता; एलापत्रः—एलापत्र; तथा—और; अङ्गिराः—अंगिरा; प्रम्लोचा—प्रम्लोचा; राक्षसः वर्यः—वर्य नामक राक्षस; नभः-मासम्—नभस (श्रावण) मास; नयन्ति—शासन करते हैं; अमी—ये।

नभस (श्रावण) मास पर, इन्द्र सूर्य देव, विश्वासु गन्धर्व, श्रोता यक्ष, एलापत्र नाग, अंगिरा मुनि, प्रम्लोचा अप्सरा तथा वर्य राक्षस के रूप में, शासन करते हैं।

विवस्वानुग्रसेनश्च व्याघ्र आसारणो भृगुः ।
अनुम्लोचा शङ्खपालो नभस्याख्यं नयन्त्यमी ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ

विवस्वान् उग्रसेनः—विवस्वान तथा उग्रसेन; च—भी; व्याघ्रः आसारणः भृगुः—व्याघ्र, आसारण तथा भृगु; अनुम्लोचा शङ्खपालः—अनुम्लोचा तथा शंखपाल; नभस्य-आख्यम्—नभस्य (भाद्र) नामक मास; नयन्ति—शासन करते हैं; अमी—ये।

नभस्य मास में, विवस्वान सूर्य देव, उग्रसेन गंधर्व, व्याघ्र राक्षस, आसारण यक्ष, भृगु मुनि, अनुम्लोचा अप्सरा तथा शंखपाल नाग के रूप में शासन चलाते हैं।

पूषा धनञ्जयो वातः सुषेणः सुरुचिस्तथा ।
घृताची गौतमश्चेति तपोमासं नयन्त्यमी ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ

पूषा धनञ्जयः वातः—पूषा, धनञ्जय तथा वात; सुषेणः सुरुचिः—सुषेण तथा सुरुचि; तथा—भी; घृताची गौतमः—घृताची तथा गौतम; च—भी; इति—इस प्रकार; तपः-मासम्—तपस् मास (माघ); नयन्ति—शासन चलाते हैं; अमी—ये।

तपस् मास पर, पूषा सूर्य देव, धञ्जय नाग, वात राक्षस, सुषेण गन्धर्व, सुरुचि यक्ष, घृताची अप्सरा तथा गौतम मुनि के रूप में शासन करते हैं।

ऋतुर्वर्चा भरद्वाजः पर्जन्यः सेनजित्तथा ।
विश्व ऐरावतश्चैव तपस्याख्यं नयन्त्यमी ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

ऋतुः वर्चा भरद्वाजः—ऋतु, वर्चा तथा भरद्वाज; पर्जन्यः सेनजित्—पर्जन्य तथा सेनजित; तथा—भी; विश्वः ऐरावतः—विश्व तथा ऐरावत; च एव—भी; तपस्य-आख्यम्—तपस्य नामक मास (फाल्गुन); नयन्ति—शासन करते हैं; अमी—ये।

तपस्य नामक मास पर, ऋतु यक्ष, वर्चा राक्षस, भरद्वाज मुनि, पर्जन्य सूर्य देव, सेनजित अप्सरा, विश्व गन्धर्व तथा ऐरावत नाग के रूप में शासन चलाते हैं।

अथांशुः कश्यपस्तार्क्ष्य ऋतसेनस्तथोर्वशी ।
विद्युच्छत्रुर्महाशङ्खः सहोमासं नयन्त्यमी ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

अथ—तब; अंशुः कश्यपः तार्क्ष्यः—अंशु, कश्यप तथा तार्क्ष्य; ऋतसेनः—ऋतसेन; तथा—और; उर्वशी—उर्वशी; विद्युच्छत्रुः महाशङ्खः—विद्युच्छत्रु तथा महाशंख; सहः-मासम्—सहस मास (मार्गशीर्ष); नयन्ति—शासन करते हैं; अमी—ये।

सहस् मास पर, अंशु सूर्य देव, कश्यप मुनि, ताक्ष्र्य यक्ष, ऋतसेन गन्धर्व, उर्वशी अप्सरा, विद्युच्छत्रु राक्षस तथा महाशंख नाग के रूप में शासन चलाते हैं।

भगः स्फूर्जोऽरिष्टनेमिरूर्ण आयुश्च पञ्चमः ।
कर्कोटकः पूर्वचित्तिः पुष्यमासं नयन्त्यमी ॥ ४२ ॥

शब्दार्थ

भगः स्फूर्जः अरिष्टनेमिः—भग, स्फूर्ज तथा अरिष्टनेमि; ऊर्णः—ऊर्ण; आयुः—आयुर्; च—तथा; पञ्चमः—पाँचवा संगी; कर्कोटकः पूर्वचित्तिः—कर्कोटक तथा पूर्वचित्ति; पुष्य-माअसम्—पुष्य मास; नयन्ति—शासन करते हैं; अमी—ये।

पुष्य मास पर, भग सूर्य, स्फूर्ज राक्षस, अरिष्टनेमि गन्धर्व, ऊर्ण यक्ष, आयुर् मुनि, कर्कोटक नाग तथा पूर्वचित्ति अप्सरा के रूप में, शासन चलाते हैं।

त्वष्टा ऋचीकतनयः कम्बलश्च तिलोत्तमा ।
ब्रह्मापेतोऽथ शतजिद् धृतराष्ट्र इषम्भराः ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ

त्वष्टा—त्वष्टा; ऋचीक-तनयः—ऋचीक का पुत्र (जमदग्नि); कम्बलः—कम्बल; च—तथा; तिलोत्तमा—तिलोत्तमा; ब्रह्मापेतः—ब्रह्मापेत; अथ—और; शतजित्—शतजित; धृतराष्ट्रः—धृतराष्ट्र; इषम्-भराः—इष मास (अश्विन) के पोषक।

इष मास का, त्वष्टा सूर्य देव, ऋचीक-पुत्र जमदग्नि मुनि, कम्बलाश्व नाग, तिलोत्तमा अप्सरा, ब्रह्मापेत राक्षस, शतजित यक्ष तथा धृतराष्ट्र गन्धर्व के रूप में, पालन-पोषण करते हैं।

विष्णुरश्वतरो रम्भा सूर्यवर्चाश्च सत्यजित् ।
विश्वामित्रो मखापेत ऊर्जमासं नयन्त्यमी ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ

विष्णुः अश्वतरः रम्भा—विष्णु, अश्वतर तथा रम्भा; सूर्यवर्चाः—सूर्यवर्चा; च—तथा; सत्यजित्—सत्यजित; विश्वामीत्रः मखापेतः—विश्वामित्र तथा मखापेत; ऊर्ज-मासम्—ऊर्ज मास (कार्तिक); नयन्ति—शासन करते हैं; अमी—ये ।

ऊर्ज मास पर, विष्णु सूर्य देव, अश्वतर नाग, रम्भा अप्सरा, सूर्यवर्चा गन्धर्व, सत्यजित् यक्ष, विश्वामित्र मुनि तथा मखापेत राक्षस के रूप में, शासन करते हैं।

तात्पर्य : इन सारे सूर्य देवों तथा उनके संगियों का उल्लेख *कूर्म पुराण* में निम्नवत् हुआ है—

धातार्यमा च मित्रश्च वरुणश्च चेन्द्र एव च।
विवस्वान् अथा पूषा च पर्जन्यश्चांशुरेव च॥
भगस्त्वष्टा च विष्णुश्च आदित्या द्वादश स्मृताः।
पुलस्त्यः पुलहश्चात्रिर् वसिष्ठोऽथांगिरा भृगुः॥
गौतमोऽथ भरद्वाजः कश्यपः क्रातुरेव च।
जमदग्निः कौशिकश्च मुनयो ब्रह्मवादिनाः॥
रथकृच्चाप्यथोजाश्च ग्रामणीः सुरुचिस्तथा।
रथचित्रस्वनः श्रोता, अरुणः सेनजित तथा॥
तार्क्ष्य अरिष्टनेमिश्च ऋतजित् सत्यजित् तथा।
अथ हेतिः प्रहेतिश्च पौरुषेयो वधस्तथा।
वर्यो व्याघ्रस्तथापश्च वायुर्विद्युद् दिवाकरः॥
ब्रह्मापेतश्च विपेन्द्रा यज्ञापेतश्च राक्षकाः।
वासुकिः कच्छनीरश्च तक्षकः शुक्र एव च॥
एलापत्रः शंखपालस्तथैरावतसंज्ञितः।
धनञ्जयो महापद्मस्तथा कर्कोटको द्विजाः॥
कम्बलोऽश्वतरश्चैव वहन्त्येनम यथाक्रमम्।
तुम्बुरुर्नारदो हाहा हूहूर्विश्वावसुस्तथा॥
उग्रसेनो वसुरुचिर्विश्वसुरथापरः।
चित्रसेनस्तथोर्णायुर्धृतराष्ट्रो द्विजोत्तमाः॥
सूर्यवर्चा द्वादशैते गन्धर्वा गायतां वराः।
कृतस्थल्यप्सरोवर्या तथान्या पुञ्जिकस्थली॥
मेनका सहजन्या च प्रम्लोचा च द्विजोत्तमाः।
अनुम्लोचा घृताची च विश्वाची चोर्वशी तथा॥
अन्या च पूर्ववचित्तिः स्याद् अन्या चैव तिलोत्तमा।
रम्भा चेति द्विजश्रेष्ठास्तथैवाप्सरसः स्मृताः॥

एता भगवतो विष्णोरादित्यस्य विभूतयः ।
स्मरतां सन्ध्ययोर्नृणां हरन्त्यंहो दिने दिने ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ

एताः—ये; भगवतः—भगवान्; विष्णोः—विष्णु के; आदित्यस्य—सूर्य देव के; विभूतयः—ऐश्वर्य; स्मरताम्—स्मरण रखने वालों को; सन्ध्ययोः—दिन की सन्धियों के समय; नृणाम्—ऐसे मनुष्यों के; हरन्ति—हर लेते हैं; अंहः—पाप; दिने दिने—दिन-प्रतिदिन।

ये सारे पुरुष सूर्य देव के रूप में भगवान् विष्णु के ऐश्वर्यशाली अंश हैं। ये देव उन लोगों के सारे पापों को दूर कर देते हैं, जो प्रत्येक सूर्योदय तथा सूर्यास्त के समय उनका स्मरण करते हैं।

द्वादशस्वपि मासेषु देवोऽसौ षड्भिरस्य वै ।
चरन्समन्तात्तनुते परत्रेह च सन्मतिम् ॥ ४६ ॥

शब्दार्थ

द्वादशसु—बारहों; अपि—निस्सन्देह; मासेषु—महीनों में; देवः—स्वामी; असौ—इस; षड्भिः—छः प्रकार के संगियों समेत; अस्य—इस ब्रह्माण्ड के लोगों के लिए; वै—निश्चय ही; चरन्—विचरण करते हुए; समन्तात्—सभी दिशाओं में; तनुते—विस्तार करता है; परत्र—अगले जीवन में; इह—इस जीवन में; च—तथा; सत्-मतिम्—शुद्ध चेतना।

इस प्रकार बारहों महीने सूर्य देव अपने छः प्रकार के संगियों के साथ सभी दिशाओं में विचरण करते हुए इस ब्रह्माण्ड के निवासियों में इस जीवन तथा अगले जीवन के लिए शुद्ध चेतना का विस्तार करता रहता है।

सामर्ग्यजुर्भिस्तल्लिङ्गैरृषयः संस्तुवन्त्यमुम् ।
गन्धर्वास्तं प्रगायन्ति नृत्यन्त्यप्सरसोऽग्रतः ॥ ४७ ॥
उन्नह्यन्ति रथं नागा ग्रामण्यो रथयोजकाः ।
चोदयन्ति रथं पृष्ठे नैरृता बलशालिनः ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ

साम-ऋक्-यजुर्भिः—साम, ऋग् तथा यजुर्वेदों के स्तोत्रों द्वारा; तत्-लिङ्गैः—जो सूर्य को प्रकट करते हैं; ऋषयः—ऋषिगण; संस्तुवन्ति—स्तुति करते हैं; अमुम्—उसकी; गन्धर्वाः—गन्धर्वगण; तम्—उसके बारे में; प्रगायन्ति—जोर-जोर से गाते हैं; नृत्यन्ति—नाचती हैं; अप्सरसः—अप्सराएँ; अग्रतः—आगे; उन्नह्यन्ति—कसते हैं; रथम्—रथ को; नागाः—नागजन; ग्रामण्यः—यक्षगण; रथ-योजकाः—रथ में घोड़े जोतने वाले; चोदयन्ति—हाँकते हैं; रथम्—रथ; पृष्ठे—पीछे से; नैरृताः—राक्षसगण; बल-शालिनः—बलवान्।

एक ओर जहाँ ऋषिगण सूर्यदेव की पहचान को प्रकट करने वाले साम, ऋग् तथा यजुर्वेदों के स्तोत्रों द्वारा सूर्य देव की स्तुति करते हैं, वहीं गन्धर्वगण भी उनकी प्रशंसा करते हैं तथा अप्सराएँ उनके रथ के आगे-आगे नाचती हैं; नागगण रथ की रस्सियों को कसते हैं और यक्षगण रथ में घोड़ों को जोतते हैं जबकि प्रबल राक्षसगण रथ को पीछे से धकेलते हैं।

वालखिल्याः सहस्राणि षष्टिर्ब्रह्मर्षयोऽमलाः ।
पुरतोऽभिमुखं यान्ति स्तुवन्ति स्तुतिभिर्विभुम् ॥ ४९ ॥

शब्दार्थ

वालखिल्याः—वालखिल्य; सहस्राणि—हजार; षष्टिः—साठ; ब्रह्म-ऋषयः—ब्रह्मर्षि; अमलाः—शुद्ध; पुरतः—आगे-आगे; अभिमुखम्—रथ की ओर मुँह किये; यान्ति—जोतते हैं; स्तुवन्ति—स्तुति करते हैं; स्तुतिभिः—वैदिक स्तुतियों द्वारा; विभुम्—सर्वशक्तिमान प्रभु की।

रथ की ओर मुँह किये साठ हजार वालखिल्य नामक ब्रह्मर्षि आगे-आगे चलते हैं और वैदिक मंत्रों द्वारा सर्वशक्तिमान सूर्य देव की स्तुति करते हैं।

एवं ह्यनादिनिधनो भगवान्हरिरीश्वरः ।
कल्पे कल्पे स्वमात्मानं व्यूह्य लोकानवत्यजः ॥ ५० ॥

शब्दार्थ

एवम्—इस तरह; हि—निस्सन्देह; अनादि—प्रारम्भ से; निधनः—अथवा अन्त; भगवान्—भगवान्; हरिः—हरि; ईश्वरः—परम नियन्ता; कल्पे कल्पे—प्रत्येक ब्रह्मा के दिन में; स्वम् आत्मानम्—अपना; व्यूह्य—वभिन्न रूपों में विस्तार करके; लोकान्—लोकों की; अवति—रक्षा करते हैं; अजः—अजन्मा प्रभु।

इस तरह अजन्मा, अनादि तथा अनन्त भगवान् सारे लोकों की रक्षा हेतु, ब्रह्मा के प्रत्येक दिन में अपना विस्तार इन अपने विशेष निजी स्वरूपों में करते हैं।

इस प्रकार श्रीमद्भागवत के बारहवें स्कन्ध के अन्तर्गत ''महापुरुष का संक्षिप्त वर्णन'' नामक ग्यारहवें अध्याय के श्री भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद के विनीत सेवकों द्वारा रचित तात्पर्य पूर्ण हुए।